



Neutral Citation No. 2026:AHC-LKO:20345

26.02.2026 को आरक्षित

20.03.2026 को उदघोषित

इलाहाबाद उच्च न्यायालय लखनऊ
आपराधिक अपील संख्या - 1936/2004

ज़फ़र अली

.....अपीलकर्ता(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

.....प्रतिवादी(गण)

अपीलकर्ता (गण) के लिए अधिवक्ता: रिशद मुर्तजा, नदीम मुर्तजा, नुसरत जहां,
रमाकर शुक्ला
प्रतिवादी (गण) के अधिवक्ता: शासकीय अधिवक्ता, नुसरत जहां

न्यायालय संख्या - 28

माननीय न्यायमूर्ति प्रमोद कुमार श्रीवास्तव

1. यह अपील अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक न्यायालय- 5 लखनऊ द्वारा सत्र परीक्षण संख्या 157/1996 में दिनांक 03.09.2004 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 374(2) के तहत दायर की गयी है। यह मामला, लखनऊ के गाजीपुर थाने में भारतीय दंड संहिता (जिसे आगे "भा.दं.सं." कहा गया है) की धारा 363, 366 और 376 के तहत, मुकदमा अपराध संख्या 591/93 के रूप में दर्ज किया गया था; जिसके अंतर्गत विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता ज़फ़र अली को भा०दं०सं० की धारा 376 के तहत सात वर्ष के कठोर कारावास और 1000/- रुपये के अर्थदंड की सज़ा सुनाई थी, जिसमें अर्थदंड अदा न करने पर अतिरिक्त सज़ा का प्रावधान भी शामिल था।
2. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री रमाकर शुक्ला और राज्य की ओर से विद्वान अ०शा०अ० श्री सुशील कुमार पांडे को सुना।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



3. अभियोजन पक्ष के मामले के अनुसार, दिनांक- 15 नवंबर, 1993 की सुबह 5:00 बजे, शिकायतकर्ता राम दावन की लगभग 14 वर्षीय बेटी, हिमालय रोड पर टहलने के लिए गई और वापस नहीं लौटी। शिकायतकर्ता को शक था कि ज़फ़र अली, जो उसके घर के सामने एक मोटर रिपेयर गैराज चलाता था, ने उसकी बेटी को बहला-फुसलाकर अगवा कर लिया है। 16 नवंबर, 1993 को सुबह 8:45 बजे, थाना- गाज़ीपुर में एक लिखित तहरीर (प्रदर्श क-1) दी गयी।
4. प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज होने के बाद विवेचना आगे बढ़ी। विवेचना के दौरान, विवेचक (जिन्हें इसके बाद "वि.अ." कहा जाएगा) उप निरीक्षक के.एम. श्रीवास्तव ने घटनास्थल का दौरा किया, एक नक्शा नज़री तैयार किया, साक्षियों के बयान दर्ज किए, और साक्ष्य इकट्ठा करने के बाद अपीलकर्ता के खिलाफ भा०दं०सं० की धारा 363, 366, 368 और 376 के तहत आरोप पत्र प्रेषित किया।
5. दं०प्र०सं० की धारा 207 के तहत ज़रूरी दस्तावेज़ प्रदान करने के बाद, मामले को सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया, जहाँ से इसे विधि अनुरूप निस्तारण के लिए लखनऊ के अपर जिला न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट-5 को सौंप दिया गया। विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता के खिलाफ भा०दं०सं० की धारा 363, 366 और 376 के तहत आरोप विरचित किए।
6. अभियोजन पक्ष ने अपने मामले को साबित करने के लिए, सात साक्षियों क्रमशः : राम दवन (अ.शा.- 1), चंद्र उर्फ मीरा (अ.शा.- 2), हेड कांस्टेबल शंभू दयाल (अ.सा.- 3), सेवानिवृत्त उ.नि. कैलाश मोहर श्रीवास्तव (अ.सा.- 4), डॉ. जी.पी. गुप्ता (अ.सा.- 5), डॉ. प्रमिला राजा (अ.सा.- 6) और श्रीमती माया जोशी (अ.सा.- 7) को परीक्षित कराया।
7. अभियोजन पक्ष ने कई प्रलेखीय साक्ष्य प्रस्तुत किए, जिनमें लिखित तहरीर (प्रदर्श क-1), चिक प्रथम सूचना रिपोर्ट (प्रदर्श क-3) और स्कूल स्थानांतरण प्रमाण पत्र/छात्रवृत्ति रजिस्टर (प्रदर्श क-10) शामिल हैं।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



8. अभियोजन पक्ष के साक्ष्य समाप्त होने के पश्चात्, अपीलार्थी-अभियुक्त का दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अंतर्गत बयान अभिलिखित किया गया। अभियुक्त ने समस्त आरोपों का खंडन करते हुए यह दावा किया कि साक्षियों ने झूठे साक्ष्य दिए हैं और उसे झूठा फंसाया जा रहा है।
9. बचाव पक्ष की ओर से, अभियुक्त ने कोई भी प्रत्यक्ष साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया। तथापि, बचाव पक्ष ने 11 दस्तावेजों की एक सूची प्रस्तुत की, जिसमें एक आवेदन की छायाप्रति (ए-18/1 से 11) भी शामिल थी, जिसे कथित तौर पर पीड़ित द्वारा थाना प्रभारी गाजीपुर को लिखा गया था।
10. दोनों पक्षों को सुनने के बाद, विद्वान विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय सुनाते हुए अपीलकर्ता-अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के तहत सात वर्ष के कठोर कारावास और 1000/- रुपये के अर्थदंड की सज़ा सुनाई, जिसमें अर्थदंड अदा न करने पर अतिरिक्त सज़ा का प्रावधान भी शामिल है।
11. आक्षेपित निर्णय और दोषसिद्धि के आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर, यह आपराधिक अपील इस आधार पर दायर की गई है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने तथ्यों और साक्ष्यों पर सही परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया है, और अनुचित तरीके से आदेश पारित किया है। विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष विकृत और विधि के विपरीत हैं।
12. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने आगे यह निवेदन किया है कि चिकित्सीय साक्ष्य, अभियोजन पक्ष के साक्षियों के साक्ष्य का समर्थन नहीं करते हैं। चिकित्सीय आख्या के अनुसार, पीड़िता की उम्र 18 से 19 वर्ष के बीच पाई गई थी; इसलिए, भा०दं०सं० की धारा 376 के तहत कोई अपराध नहीं बनता है। साक्षियों के साक्ष्य में बड़ा विरोधाभास है, और यहाँ तक कि बरामदगी की बात भी स्पष्ट रूप से साबित नहीं हुई है। इसके बावजूद, उन्हीं साक्ष्यों के आधार पर, अपीलकर्ता को भा०दं०सं० की धारा 376 के तहत उस पर लगाए गए आरोपों के लिए

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



दोषी ठहराया गया है। किसी भी स्वतंत्र साक्षी को परीक्षित नहीं कराया गया था। पीड़िता की इसमें सहमति थी। इसलिए, आक्षेपित निर्णय और आदेश को निरस्त किया जाना चाहिए और इस अपील को स्वीकार किया जाना चाहिए।

13. इसके विपरीत, विद्वान अ.शा.अ. ने अपील का विरोध किया है और यह निवेदन किया है कि अभियोजन पक्ष ने अभियुक्त पर लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए पर्याप्त साक्ष्य पेश किए हैं। उन्होंने आगे यह भी निवेदन किया कि, शैक्षणिक प्रमाण पत्रों के अनुसार, पीड़िता नाबालिग थी, और विद्वान विचारण न्यायालय ने भी यह माना है कि कथित घटना के समय वह नाबालिग थी। इसलिए, सहमति के सवाल का कोई महत्व नहीं है और, परिणामस्वरूप, पीड़िता के साक्ष्य के आधार पर, अपीलकर्ता को भा०दं०सं० की धारा 376 के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है। विचारण न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय ठोस, विश्वसनीय, निर्णायक और पुख्ता साक्ष्यों पर आधारित है। आक्षेपित निर्णय और आदेश में कोई भी विधि विरुद्ध तथ्य बात या कमी नहीं है। यह आपराधिक अपील पूरी तरह से बेबुनियाद है और इसे निरस्त कर दिया जाना चाहिए।

14. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं की दलीलें सुनने के पश्चात्, वर्तमान अपील में निर्धारण हेतु निम्नलिखित बिंदु उत्पन्न होता है: क्या विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी-अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 376 के अंतर्गत दोषसिद्ध एवं दंडादिष्ट करने में कोई विधिक त्रुटि की है?

15. इस तथ्य पर आने से पहले, यहाँ यह उल्लेख करना उचित है कि कथित घटना वर्ष 1993 में घटित हुई थी, और उस समय भा०दं०सं० की धारा 375 के प्रावधानों में संशोधन नहीं किया गया था। भा०दं०सं० की धारा 375, जैसा कि यह अधिनियम संख्या 13, 2013 द्वारा प्रतिस्थापित किए जाने से पहले थी, इस प्रकार है:

“ उस व्यक्ति को ‘बलात्कार’ करने वाला कहा जाता है जो इसके बाद के मामलों को छोड़कर, निम्नलिखित छह विवरणों में



से किसी भी परिस्थिति में किसी स्त्री के साथ यौन संबंध बनाता है :

पहला—उसकी इच्छा के विरुद्ध।

दूसरा—उसकी सहमति के बिना।

तीसरा—उसकी सहमति से, जब उसकी सहमति उसे या किसी ऐसे व्यक्ति को, जिसमें उसकी दिलचस्पी है, मौत या चोट के भय में डालकर हासिल की गई हो।

चौथा—उसकी सहमति से, जब पुरुष यह जानता हो कि वह उसका पति नहीं है, और उसकी सहमति इसलिए दी गई है क्योंकि वह यह मानती है कि वह कोई दूसरा पुरुष है जिससे उसकी कानूनी तौर पर शादी हुई है या जिसके साथ वह स्वयं को कानूनी तौर पर विवाहित मानती है।

पांचवां—उसकी सहमति से, जब ऐसी सहमति देते समय, मानसिक अस्वस्थता या नशे के कारण, या उसके द्वारा स्वयं या किसी अन्य के माध्यम से कोई नशा करने वाला या अहितकर पदार्थ दिए जाने के कारण, वह उस बात की प्रकृति और परिणामों को समझने में असमर्थ हो जिसके लिए वह सहमति दे रही है।

छठा—उसकी सहमति से या बिना सहमति के, जब उसकी आयु सोलह वर्ष से कम हो।

स्पष्टीकरण—बलात्कार के अपराध के लिए आवश्यक यौन संबंध को पूरा करने हेतु, लिंग का प्रवेश ही पर्याप्त है।

अपवाद—किसी पुरुष द्वारा अपनी ही पत्नी के साथ किया गया यौन संबंध—यदि पत्नी की आयु पंद्रह वर्ष से कम न हो—तो वह बलात्कार नहीं है।

16. उपर्युक्त विधि को ध्यान में रखते हुए और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन करने पर, यह स्पष्ट होता है कि इस अपील का मूल बिंदु यह है कि वर्ष 1993 में कथित घटना घटित होने के समय, पीड़िता की सहमति का कोई महत्व था अथवा नहीं?



17. विद्वान विचारण न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय में यह पाया कि शैक्षणिक अभिलेखों के अनुसार, पीड़िता की जन्मतिथि 21.02.1979 दर्ज है, और इस तरह 16.11.1993 को हुई कथित घटना के समय उसकी उम्र लगभग 14 वर्ष थी। हालाँकि, विचारण न्यायालय ने यह भी गौर किया कि जिरह के दौरान, जब पीड़िता के पिता से उनके बच्चों की उम्र के अंतर के बारे में सवाल किया गया, तो उन्होंने विरोधाभासी उत्तर दिए। इसके अलावा, रेडियोलॉजिकल जाँच के अनुसार, पीड़िता की उम्र 18 से 19 वर्ष के बीच आँकी गई थी। डॉ. जी.पी. गुप्ता (अ.सा.-5) ने अपने साक्ष्य में कहा कि घुटने और कलाई के पास की अधिवार्ध (हड्डी के सिरे) आपस में जुड़ चुकी थीं, और इसी आधार पर उन्होंने राय दी कि पीड़िता की उम्र 18 से 19 वर्ष के बीच थी। इसके बावजूद, विद्वान विचारण न्यायालय ने चिकित्सीय साक्ष्यों का विश्लेषण करने और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के आलोक में, पीड़िता की उम्र 16 वर्ष मानी। इसी आधार पर, विचारण न्यायालय ने अपीलकर्ता-आरोपी को भा०दं०सं० की धारा 363 और 366 के तहत आरोपों से दोषमुक्त कर दिया, लेकिन साथ ही अपीलकर्ता-अभियुक्त को भा०दं०सं० की धारा 376 के तहत दोषी ठहराया।

यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अ.सा.-1 राम दवान के बयान पर विस्तार से चर्चा की है, जो आक्षेपित फैसले के पृष्ठ 3 से 5 तक है, और स्पष्ट रूप से यह टिप्पणी की है कि पीड़िता की जन्म तिथि के संबंध में अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किए गए दस्तावेज़ विरोधाभासी हैं; इसलिए, पीड़िता के पिता अभियोजन साक्षी- 1 राम दवान द्वारा बताई गई गणना मान्य नहीं है। लेकिन साथ ही, विद्वान विचारण न्यायालय ने डॉ. जी.पी. गुप्ता (अ.सा.- 5) द्वारा निर्धारित उम्र पर भरोसा नहीं किया, जो पीड़िता की रेडियोलॉजिकल उम्र पर आधारित थी। हैरानी की बात यह है कि इस मामले में पीड़िता ने भी एक प्रार्थना पत्र देकर यह कहा है कि उसके पिता ने 'तहरीर' (लिखित शिकायत) में उसकी उम्र गलत बताई है, जबकि वह 18 साल की है। अंत में, विद्वान विचारण न्यायालय ने अपने फैसले में यह टिप्पणी की कि ऊपर की गई जाँच-पड़ताल के आधार पर, न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अभियुक्त के विरुद्ध यह आरोप कि "15.11.2993 को सुबह लगभग 5.00 बजे उसने पीड़िता को उसकी वैध संरक्षकता से अगवा/अपहृत किया था, और उस समय पीड़िता की उम्र 16 साल से कम थी, तथा यह अपहरण/अगवा करने की कार्रवाई पीड़िता को शादी के लिए विवश करने के उद्देश्य से की गई थी"—सिद्ध नहीं होता है। इसलिए, उसे भा०दं०सं० की धारा 363/366 के तहत लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है।

अतः, उपरोक्त निष्कर्ष से यह स्पष्ट है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने पीड़िता की उस उम्र को स्वीकार नहीं किया, जिसके अनुसार कथित घटना के समय उसकी उम्र 16 वर्ष से कम थी; और विचारण न्यायालय ने आगे यह निष्कर्ष निकाला कि कथित घटना के समय, पीड़िता की उम्र 18 वर्ष से कम थी। इसलिए, अपीलकर्ता-अभियुक्त को भा०दं०सं० की धारा 376 के तहत अपराध का दोषी ठहराया गया है।

चूँकि पीड़िता की उम्र 18 वर्ष से कम मानी गई है, और विचारण न्यायालय ने यह भी माना है कि यह साबित नहीं हुआ है कि पीड़िता की उम्र 16 वर्ष से कम थी; इसलिए, अपीलकर्ता-अभियुक्त के विरुद्ध भा०दं०सं० की धारा 376 के तहत दोषसिद्धि के संबंध में दिए गए निष्कर्ष विरोधाभासी और त्रुटिपूर्ण हैं, क्योंकि भा०दं०सं० की धारा 376(5) और (6) के तहत कानून यह प्रावधान करता है कि यदि पीड़िता की उम्र 16 वर्ष से कम है, तो उसकी सहमति का कोई महत्व नहीं होता।

18. यहाँ यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि विद्वान विचारण न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय में यह टिप्पणी की है कि अभियुक्त और पीड़िता के बीच प्रेम-संबंध था, और पीड़िता ने अपनी स्वेच्छा से ही अपना घर छोड़ा था; साथ ही, डॉ. प्रमिला (अ.सा.- 6) ने यह राय व्यक्त की है कि पीड़िता यौन-संबंध बनाने की आदी थी।

19. विद्वान् विचारण न्यायालय ने यह भी पाया कि यह सच है कि अभियुक्त ने पीड़िता के साथ शारीरिक संबंध बनाने के लिए किसी भी



तरह की ज़ोर-ज़बरदस्ती नहीं की थी; इसी वजह से चिकित्सीय आख्या में पीड़िता के शरीर पर कोई चोट नहीं पाई गई। इसके अलावा, पीड़िता ने अपीलकर्ता को एक प्रेम पत्र भी लिखा था, जिसे पुलिस/थाना प्रभारी, गाज़ीपुर ने बरामद किया था; इस पत्र से यह भी स्पष्ट होता है कि शारीरिक संबंध बनाने के मामले में पीड़िता की भी पूरी सहमति थी।

20. इस प्रकार, ऊपर किए गए पर्यवेक्षण से यह स्पष्ट होता है कि एक ओर तो विद्वान विचारण न्यायालय ने यह पाया है कि यह साबित नहीं हुआ है कि पीड़िता की उम्र 16 वर्ष से कम थी, और दूसरी ओर, विचारण न्यायालय ने यह भी टिप्पणी की है कि पीड़िता की उम्र 18 वर्ष से कम थी। यह भी पाया गया है कि वह इस मामले में अपनी सहमति से शामिल थी। उसने अपनी स्वेच्छा से अपना पैतृक घर छोड़ा था और उसे अपीलकर्ता-अभियुक्त से प्यार भी हो गया था; इसलिए, यदि इस मामले के सभी तथ्यों, सबूतों और परिस्थितियों पर समग्र रूप से विचार किया जाए, तो मैं यह पाता हूँ कि विचारण न्यायालय द्वारा भा०दं०सं० की धारा 376 के तहत दोषसिद्धि के संबंध में दिया गया निष्कर्ष—जो इस आधार पर था कि पीड़िता की उम्र 18 वर्ष से कम थी, और इसलिए उसकी सहमति का कोई महत्व नहीं था—त्रुटिपूर्ण है। ऐसा इसलिए है क्योंकि, जैसा कि ऊपर कानून में स्पष्ट किया गया है, यदि पीड़िता की उम्र 16 वर्ष से कम हो, तभी उसकी सहमति का कोई महत्व नहीं होता; चूँकि कथित घटना वर्ष 1993 की है, लेकिन वर्तमान मामले में रेडियोलॉजिकल राय (प्रदर्श क-8) के अनुसार—जो कोहनी, घुटने और कलाई की एक्स-रे रिपोर्ट पर आधारित है—पीड़िता की उम्र 18 से 19 वर्ष के बीच है। अतः, यह मामला भा०दं०सं० की धारा 375(6) के दायरे में नहीं आता है; इसलिए, पीड़िता की सहमति महत्वपूर्ण मानी जाएगी, क्योंकि यह स्पष्ट है कि उसके साथ स्थापित संबंध उसकी अपनी इच्छा और सहमति पर आधारित था। और जब वह वयस्क है, तो उसकी सहमति का महत्व होगा; इसलिए, इस संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा निकाला गया निष्कर्ष विकृत, गलत है।



- 21.अतः, उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुए, तथा इस मामले के तथ्यों, साक्ष्यों और परिस्थितियों का समग्र रूप से विश्लेषण करने के बाद, और पूर्वोक्त कानूनी प्रावधानों के आलोक में, मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ कि विचारण न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश पारित करने में त्रुटि की है, और इसलिए उक्त निर्णय और आदेश को निरस्त किया जाना उचित है।
- 22.उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान अपराधिक अपील स्वीकार की जाती है; और परिणामस्वरूप, अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट-5, लखनऊ द्वारा सत्र परीक्षण संख्या 157/1996 में दिनांक 03.09.2004 को पारित निर्णय और आदेश—जो कि थाना गाजीपुर, लखनऊ में भारतीय दंड संहिता की धारा 363, 366 और 376 के तहत पंजीकृत मुकदमा अपराध संख्या 591/93 से उत्पन्न हुआ था, और जिसके अंतर्गत अपीलकर्ता ज़फ़र अली को धारा 376 भा०दं०सं० के तहत दोषी ठहराते हुए दंडादेश दिया गया था—को एतद्वारा रद्द किया जाता है।
- 23.अपीलकर्ता-अभियुक्त को भा०दं०सं० की धारा 376 के तहत लगाए गए आरोप से दोषमुक्त किया जाता है। बताया गया है कि वह ज़मानत पर है। उसे आत्मसमर्पण करने की आवश्यकता नहीं है। उसकी ज़मानत नामें निरस्त किए जाते हैं और प्रतिभू को मुक्त किया जाता है। इसके अतिरिक्त, उसे निर्देश दिया जाता है कि वह दं.प्र.सं. की धारा 437-क के प्रावधानों का पालन करे, जिससे विचारण न्यायालय संतुष्ट हो।
- 24.विचारण न्यायालय का अभिलेख, निर्णय और आदेश की प्रति के साथ, सूचना हेतु संबंधित न्यायालय को वापस भेज दिया जाए।

(प्रमोद कुमार श्रीवास्तव, न्यायमूर्ति)

20 मार्च, 2026

अरविंद